

ISSN: 23202467

युगान्तर

अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यिक एवं शोध पत्रिका
“हिन्दी साहित्यिक”

त्रैमासिक पत्रिका



आरती पब्लिशिंग हाऊस एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

अनुक्रमाणिका

17.	दलित स्त्रियों में प्रतिरोध का स्वर (प्रेमचन्द के संदर्भ में) हरिश्चन्द्र यादव/प्रो. चन्दा बैन/डॉ. हरीसिंह गौर	75 – 7
18.	TEACHERS AND DEPRESSION OF STUDENTS / Dr.Madhulika Varma	78 – 84
19.	Understanding Daughter's Right to Property / Mrs. Anju	85 & 91
20.	EMANCIPATION IN QUASI ACTIVE METHODS / Dr.Madhulika varma/Naseha Siddiqui	92 - 97
21.	Fluoride Contamination in groundwater of Alwar, district Rajasthan / Manju Meena	98 - 102
22.	जोधपुर जिले के उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों द्वारा पढ़ी जाने वाली पत्रिकाओं का उनकी शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रभाव / नवीन कुमार	103 – 105
23-	Go Paper-free A Study of Indian Paper Industry / Dr. Nisha Bansal	106 - 114
24.	लोक साहित्य में जसंस्कृति / डॉ० शशि प्रभा शर्मा	115 –118
25.	दूरस्त शिक्षा में तकनीकी का योगदान / डा. (श्रीमती) अंजू लता	119 – 122
26.	“Impact of Brand on Consumer Buying Decision” / Dr. Kalpana Verma	123 - 127
27.	स्वतंत्रता आंदोलन में 1876 से 1910 तक बस्तर के आदिवासियों का योगदान / डॉ. भावना कमाने	128 – 131
28.	रीवा जिले में महिला उद्यमियों की दैनिक आय की स्थिति / अनीता पाण्डेय	132 – 135
29.	जोधपुर संभाग के प्रमुख धार्मिक स्थलों का सामाजिक जीवन पर प्रभाव एवं परम्पराओं के निर्वहन में इनका योगदान / प्रो. एम. आर. देवड़ा	136 – 143
30.	“शान्ति अध्ययन के प्रमुख अध्याय के रूप में गाँधी” / अमित कुमार	144 – 148
31.	जाखम सिंचाई बांध परियोजना का जनजातिय जनसंख्या पर प्रभाव एक भौगोलिक अध्ययन / Dr Pankaj Rawal/Ram Lal Janwa	149 - 157
32.	विन्ध्य प्रदेश में शिक्षा जागृति-एक अध्ययन / डॉ. अजय शंकर पाण्डेय	158 – 160

दलित स्त्रियों में प्रतिरोध का स्वर (प्रेमचन्द के संदर्भ में)

हरिश्चन्द्र यादव
(शोध अध्येता)
प्रो. चन्दा बैन
हिन्दी विभाग
डॉ. हरीसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
सागर, मध्यप्रदेश
Email-yadavharishchandra282@gmail.com
Mob.-9454169204

‘साहित्य समाज का दर्पण है’ इस उक्ति का समाज में प्रचार-प्रसार खूब जोर-शोर से हुआ, लेकिन भारतीय साहित्य के संदर्भ में इस सिद्धांत की व्यावहारिक परिणति नहीं हुई। दलित स्त्रियाँ जितना समाज में उपेक्षित रही, उतना ही साहित्य में भी उपेक्षित रहीं। समाज में अपने अस्तित्व और साहित्य में अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करती नज़र आती हैं, जिसे प्रेमचन्द ने अपने साहित्य में अनूठे ढंग से रेखांकित किया है। इन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज में उपेक्षित स्त्रियों के प्रतिरोध के स्वर को यथार्थ रूप में चित्रित किया है। ‘माधुरी’ दिसम्बर 1929 में प्रेमचंद की कहानी घासवाली प्रकाशित हुई थी। उस कहानी में प्रेमचंद ने दलित स्त्रियों के साथ सवर्णों के जारकर्म की समस्या को उठाया है। मुलिया घासवाली है, महावीर चमार की खूबसूरत पत्नी है, जिस पर ठाकुर चैनसिंह लट्ठ होता हाता है। “मालूम नहीं, चमारों के इस घर में वह अप्सरा कहाँ से आ गयी थी।” कहानी में प्रेमचंद की यह टिप्पणी यद्यपि चमारों के लिए अपमानजनक है, पर इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि दलितों के रूपवान स्त्रियों के सम्बन्ध में जारकर्मी सर्वण प्रायः इसी प्रकार की फब्तियाँ कसते थे। भारतीय समाज का घृणित यथार्थ भी था। लेकिन मुलिया ऐसी कमजोर स्त्री न थी कि कोई भी उसे अपनी रखैल बना लेता। चैनसिंह ने उसका हाथ पकड़ा, तो वह ज्वाला बन गयी। प्रेमचंद लिखते हैं कि चैनसिंह को जीवन में यह नया अनुभव हुआ था वह समझता था।

‘घासवाली’ कहानी में जमींदार चैनसिंह को अपने जीवन का कड़वा सत्य का अनुभव कराते हैं। कहानी की नायिका मुलिया कहती है कि “नीची जातों में रूप माधुर्य का इसके सिवा और काम ही क्या है कि ऊँची जातिवालों का खिलौना बने! ऐसे कितने ही मार्क उसके जीते थे; पर आज मुलिया के चेहरे का वह रंग उसका वह क्रोध, वह अभिमान देखकर उसके छक्के छूट गए। उसने लज्जित होकर उसका हाथ छोड़ देता है।”² यदि गरीब नहीं होती तो किसी की मजाल थी कि इस तरह उसका अपमान करता! उसके बाद मुलिया मुस्कराते हुए जवाब देती हुई बोलती है “मेरा आदमी तुम्हारी औरत से इसी तरह बातें करता तो तुम्हें कैसा लगता? तुम उसकी गर्दन काटने पर तैयार हो जाते कि नहीं? बोलो! क्या समझते हो कि महावीर चमार है तो उसकी देह में लहू नहीं है? उसे लज्जा नहीं है, अपनी मर्यादा का विचार नहीं है? मेरा रूप रंग तुम्हें भाता है। क्या घाट के किनारे तुझसे कहीं सुन्दर औरतें नहीं घूमा करती? मैं उनके तलवों की बराबरी भी नहीं कर सकती। तुम समें से किसी से क्यों नहीं दया मांगते! क्या उनके पास दया नहीं है? मगर वहां तुम न जाओगे, क्योंकि वहां जाते समय तुम्हारी छाती दहलती है। मुझसे दया मांगते हो, इसलिए न कि चमारिन हूँ, नीच जाति हूँ और नीच जाति की औरत जरा-सी घुड़की धमकी या जरा-सी लालच से तुम्हारी मुट्ठी में आ जाएगी। कितना सस्ता सौदा है।”³

दलित स्त्रियों को सभी बदनाम करते हैं, पर उच्च जातियों के घरों की स्त्रियों के व्यभिचार को कोई नहीं कहता।

मुलिया बेधड़क कहती है “मैं भी रोज बाजार जाती हूँ, बड़े-बड़े घरों का हाल जानती हूँ। मुझे किसी बड़े घर का नाम बता दो, जिसमें कोई साईस, कोई कोचवान, कोई कहार, कोई पण्डा, कोई महाराजन घुमा बैठा हो? यह सब बड़े घरों की लीला है और वह औरतें जो कुछ करती हैं, ठीक करती हैं। उनके घर वाले भी तो चमारियों और कहारियों पर जान देते फिरते हैं। लेना-देना बराबर हो जाता है।”⁴

इस कहानी के माध्यम से मुलिया ने साईस, कोचवान, कहार, पंडा और महाराज का नाम लिया, पर किसी दलित जाति का नाम नहीं लिया। शायद इसलिए कि उस समय दलित जातियों का द्विजों के घरों में जाना वर्जित था, यह बाद प्रेमचंद जानते थे, परन्तु घर के बाहर भी द्विज स्त्रियाँ दलित नौजवानों से खूब आकर्षित होती रहती हैं। इस बाद को प्रेमचंद नहीं दिखा सकते थे। परन्तु दलित लेखकों ने इसका जिक्र अपनी रचनाओं के माध्यम से किया है। ऐसी ही घटना ओमप्रकाश वाल्मीकि की ‘ग्रहण’ इसी पृष्ठभूमि की कहानी है। प्रेमचंद ने अपनी कहानी ‘दो कब्रें’ कहानी में मुलिया के माध्यम से उसी गर्व से भरे हुए स्वर में कहलवाते हैं कि “मेरी एक नहीं, दोनों आँखें फूट जाएं, तब भी वह मुझे इसी तरह रखेगा। मुझे उठावेगा, बैठावेगा, खिलावेगा! तुम चाहते हो, मैं ऐसे आदमी के साथ कपट करूँ? जाओ, अब मुझे कभी न छेड़ना, नहीं अच्छा न होगा।”⁵

इसी प्रकार सुलोचना ने क्रोधित होकर कही, “स्त्री इसके लिए मजबूर नहीं है कि आपकी आँखों से देखे और आपके कानों से सुने। उसे यह निश्चय करने का अधिकार है कि कौन-सी चीज उसके हित की है, कौन-सी नहीं।”⁶ यह भी एक प्रकार की विडम्बना है जिसमें सुलोचना ने निर्भीकता से कहा, “जी नहीं, मेरे लिए बेड़िया तैयार की जा रही है। मैं इन बेड़िया को नहीं पहन सकती। मैं अपने आत्मा को उतना ही स्वाधीन समझती हूँ, जितना कोई मर्द समझता है।”⁷

इस प्रकार से भारतीय महिला अपने को स्वतंत्र विचार प्रकट करती है। “यह तो वहाँ पहुँचकर मालूम होगा। अगर मजूरी ही करनी पड़े तो कोई बात नहीं, लेकिन अगर किसी ने कुदृष्टि से देखा तो मैंने निश्चय कर लिया है कि या तो उसी के प्राण ले लूंगी या अपने प्राण दे दूंगी।”⁸ स्त्री अपने मर्यादा को बचाने के लिए जान देने को तैयार रहती थी और मजदूरी करके जीवन का निर्वाह करने के लिए हमेशा अग्रसर रहती थी। कहती भी है “मैं परमात्मा की दृष्टि से निर्दोष थी, पर संसार की दृष्टि में कलंकित हो चुकी थी। रात को किसी युवती का घर से निकल जाना कलंकित करने के लिए काफी था।”⁹ इस तरह भारतीय समाज में स्त्रियों की दिनचर्या को दर्शाता है कि यदि वह मर्यादित होने पर भी यदि घर से बाहर एक दिन भी बिताती है तो समाज उसे कलंकित करने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ता है। जबकि गौरा ने हँसकर कहा “बहन, अपने देवता से भी कोई झगड़ा करूंगी? जिस दिन झगड़े की नौबत आएगी, कहीं डूब मरूंगी। मुझसे कहके जाने पाते? मैं उनके पैरों से लिपट न जाती।”¹⁰ इसमें स्त्री के व्यक्तित्व को दर्शाता है कि कितनी ही मुखरता अभिव्यक्त होता है जिसमें अपने पति देवता का दर्जा देती है लेकिन पुरुष हमेशा उनको हेय दृष्टि से देखता है फिर भी स्त्री मर्यादा में रहते हुए संघर्ष करती हुई नजर आती है। कभी-कभी अपने पुत्रों के लिए धर्म के ठेकेदारों से तर्कशक्ति बाते करती नजर आती है। “पापियों मेरे बच्चे के प्राण लेकर दूर क्यों खड़े हो? मुझे भी क्यों नहीं उसी के साथ मार डालते? मेरे छू लेने से ठाकुरजी को छूत लग गई? पारस को छूकर लोहा सोना हो जाता है, पारस लोहा नहीं हो सकता। मेरे छूने से ठाकुरजी अपवित्र हो जाएंगे। मुझे बनाया तो छूत नहीं लगी? लो, अब कभी ठाकुरजी को छूने नहीं आऊंगी। ताले में बंद रखो, पहरा बैठा दो। हाय, तुम्हें दया छू भी नहीं गई। तुम इतने कठोर हो, बाल बच्चेवाले होकर भी तुम्हें एक अभागिन माता पर दया न आई। जिस पर धर्म के ठेकेदार बनते हो! तुम सबके सब हत्यारे हो...डरो मत, मैं थाना-पुलिस नहीं जाऊंगी। मेरा न्याय भगवान् करेंगे, अब उन्हीं के दरबार में फरियाद करूंगी।”¹¹

बच्चे को लेकर मंदिर में प्रवेश करने का प्रयास करती है परन्तु धर्म के ठेकेदार उसे प्रवेश करने से पहले ही

मार-मार कर उसके बच्चे की जान ले लेते हैं जिसमें सुखिया कहता है कि हम आप सभी भगवान् की संतान हैं तो मेरे प्रवेश मात्र से ठाकुर जी अछूत कैसे हो सकते हैं यदि अछूत हो सकते हैं तब हमको बनाते वक्त अछूत हो गये दोनों इस तरह से समाज में मुखर होकर अपनी बातों को रखती है। फिर भी समाज में ऐसी कुप्रथा महजुद था, और आज भी है।

स्त्री के सतीत्व को बचाना भी एक बहुत ही बड़ी चुनौती होती है जिसमें मुलिया कहती है "लाला तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ मुझे मत छोड़ो। यह सारी विपत्ति तुम्हारी लाई हुई है। तुम्ही मेरे शत्रु हो। फिर भी तुम्हें लाज नहीं आती! कहते हो, भैया अब किस काम के हैं? मुझे तो अब वह पहले से कहीं ज्यादा अच्छे लगते हैं। जब मैं न होती, तो वह दूसरी सगाई कर लेते, अपने हाथों ठोक खाते। आज मैं ही उनका आधार हूँ। वह मेरे सहारे जीते हैं। अगर मैं इस संकट में उनके साथ दगा करूँ, तो मुझसे बढ़कर अधम कौन होगा। जबकि मैं जानती हूँ कि इस संकट का कारण भी मैं ही हूँ।"¹²

अपने पति के बीमार होने का कारण स्वयं स्वीकार करती है और सेवारत रहती है। उसका देवर विवाह का प्रस्ताव देता है जिसे वह ठुकराते हुए कहती है कि "तुम उनकी पैरों की धूल के बराबर नहीं हो लाला! क्या कहते हो तुम? उजले कपड़े और चिकने मुखड़े से कोई आदमी सुन्दर नहीं होता। मेरी आँखों में तो उनके बराबर कोई दिखाइयी नहीं देता।"¹³ इस प्रकार सतीत्व के रूप में कपड़े और चिकने चेहरे से मतलब नहीं होता है। मतलब पति के साथ सात जन्मों तक का रिश्ता निभाने की बात करती है। अपने पति को छोड़कर दूसरे के विषय में सोचना पाप समझती है परन्तु यही भी जानती है कि मेरे अभाव में मेरा पति दूसरा विवाह कर लेगा, लेकिन फिर भी वह तैयार नहीं होती है, मृत्यु के बाद जब लाला साथ निभाने का प्रस्ताव रखता है तो मुलिया करती है "भैया नहीं रहे तो क्या हुआ; भैया की यादें तो हैं! उनका प्रेम तो है, उनकी सूरत तो दिल में है, उनकी बातें तो कानों में हैं। तुम्हारे लिए और दुनिया के लिए वह नहीं है; मेरे लिए वह अब भी वैसे ही जीते-जागते हैं। मैं अब भी उन्हें वैसे ही बैठे देखती हूँ। पहले तो देह का अन्तर था। अब तो वह मुझसे और नगीच हो गए हैं। और ज्यों-ज्यों दिन बीतेंगे और भी नगीच होते जाएंगे। भरे-पूरे घर में दाने की कौन कदर करता है? जब घर खाली हो जाता है, तब मालूम होता है कि दाना क्या है। पैसावाले पैसे की कदर क्या जानें! पैसे की कदर तब होती है जब हाथ खाली हो जाता है तब आदमी एक एक कौड़ी दांत से पकड़ता है। तुम्हें भगवान् ने दिल ही नहीं दिया, तुम क्या जानो, सोहबत क्या है? घरवाली को मरे अभी छः महिने भी नहीं हुए और तुम सांड बन बैठे। तुम मर गए होते तो इसी तरह वह भी अब तक किसी के पास चली गई होती? मैं जानती हूँ कि मैं मर जाती तो मेरा सिरताज 'जन्म' भर मेरे नाम को रोया करता। ऐसे ही पुरुषों की स्त्रियां उन पर प्राण देती हैं। तुम जैसे सोहदों के भाग में पतल चाटना लिखा है; चाटो; मगर खबरदार, आज से मेरे घर में पाव न रखना, नहीं तो जान से हाथ धोओगे! बस, निकल जाओ।"¹⁴

इस तरह से मुलिया लाला को धिक्कारते हुए अपने सतीत्व की रक्षा करती है। परन्तु अपने सात जन्म के रिश्तों को निभाने का प्रयास करती है और पूरे पुरुष समाज को शिक्षा भी देने का प्रयास करती है कि अपने जीवनसाथी के प्रति वफादार रहना चाहिए। प्रेम देने से प्रेम मिलता है। प्रेम हमेशा विश्वास के नींव पर पलता है न की हवा में। इसी कड़ी में प्रेमचंद की 'आगा-पीछा' कहानी में जब प्रेम करने के बाद भगत विवाह का निर्णय नहीं ले पाता है तो कोकिला का कोकिला का मुख तमतमा उठा और बोली "हाँ, क्यों राजी होंगे? हम लोग उनसे भी नीच हैं न! लेकिन जब तुम उनकी इच्छा के दास थे, तो तुम्हें उनसे पूछकर यहां आना-जाना चाहिए था। इस तरह हमारा अपमान करके तुम्हें क्या मिला? यदि मुझे मालूम होता कि तुम अपने माँ-बाप के इतने गुलाम हो, तो यह नौबत ही काहे को आती?"¹⁵

देखा जाय तो गाँधी जी ने अहिंसा और सत्याग्रह के सिद्धांत प्रतिपादित किये, जिसमें स्त्री और पुरुष को समानता का अधिकार मिले। उन्होंने कहा कि "नारी को अबला कहना, उसके प्रति पुरुष का अन्याय है। पुरुष को कोई अधिकार नहीं कि वह नारी की पवित्रता का नियंता बने।"¹⁶ इस तरह 'गोदान' में प्रेमचंद लिखते हैं "उसी वक्त उसकी माँ, बाप दोनों

भाई और कई अन्य चमारों ने न जाने किधर से आकर मातादीन को घेर लिया। सिलिया की माँ ने आते ही उसके हाथ से अनाज की टोकरी छीनकर फेंक दी और गाली देकर बोली— रॉड, जब तुझे मजदूरी ही करनी थी, तो घर की मजूरी छोड़कर यहाँ क्या करने आयी! जब ब्राह्मण के साथ रही है, तो ब्राह्मण की तरह रह। सारी बिरादरी की नाक कटवा कर भी चमारिन ही बनना था, तो यहाँ क्या घी का लौंदा देने आयी थी। चुल्लू भर पानी में डूब नहीं मरती।”¹⁷

निरसंदेह आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सत्य ही कहा था कि “प्रेमचंद शताब्दियों से पद दलित, अपमानित, उपेक्षित लोगों की आवाज थे। कलम का सम्राट पदों में कैद, पग-पग पर लांछित और असहाय नारी जाति की महिमा के जबरदस्त आलोचक रहे हैं। मुंशी प्रेमचंद गरीबों और बेसहारा लोगों के हितैशी रहे हैं। समता के समर्थक वे समाज सुधारके पक्षधर थे।”¹⁸

उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि दलित समाज की स्त्रियों को अनेक प्रकार से सामाजिक दंश सहना पड़ता है क्योंकि समाज में अभिजात्य वर्ग के पुरुषों की निगाह उनके चरित्र से लेकर बंधुवा मजूरी तक व्याप्त है। परन्तु तब भी दलित स्त्रियाँ मुखर होकर जवाब देती हुई अपनी सामाजिक मर्यादा का रखरखाव करते हुए, अपने अधिकारों की मांग करती हैं। देखा जाय तो प्रेमचंद ने कहीं-न-कहीं सुलोचना, मुलिया और सिलिया के माँ के माध्यम से अभिव्यक्ति को प्रस्तुत करने का सफल प्रयास करते हैं। वास्तव में समाज में दलित स्त्रियों ने अपने विचारों के प्रतिरोध स्वर को रखती हुई अभिजात्य वर्ग के पुरुष को निस्तेज करती हैं और पुनः अपने अधिकारों को स्वीकार भी करवाती हैं।

संदर्भ ग्रंथ :-

- 1— प्रेमचंद, सम्पूर्ण कहानियाँ, उपर्युक्त, खण्ड-4, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, 1990, पृष्ठ 305
- 2— वही, पृ. 304
- 3— वही, पृष्ठ 307-308
- 4— वही, पृष्ठ 307
- 5— प्रेमचंद, भारतीय दलित जीवन की कहानियाँ, कल्याणी शिक्षा परिषद् प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृष्ठ 170
- 6— वही, पृष्ठ 88
- 7— वही, पृष्ठ 88
- 8— वही, पृष्ठ 28
- 9— वही, पृष्ठ 29
- 10— वही, पृष्ठ 23
- 11— वही, पृष्ठ 55-56
- 12— वही, पृष्ठ 109
- 13— वही, पृष्ठ 109-110
- 14— वही, पृष्ठ 110
- 15— वही, पृष्ठ 138
- 16— डॉ. रमेश कुमार, समकालीन कहानियों में दलित चेतना : एक अध्ययन, सिद्धार्थ बुक, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2014, पृ. 68
- 17— आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, ग्रंथावली भाग-10, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1981, पृ. 325
- 18— प्रेमचंद, गोदान, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 1995, पृष्ठ 213